



विपश्यना

[साधकों का मासिक प्रेरणापत्र]

रजि. नं. १९१५६/७१

पोस्टल रजि. नं. NSK-64

वर्ष ९ • बम्बई • बुद्धवर्ष २५२३ • आश्विन पूर्णिमा [शक] • दि. ५-१०-१९७९ • अंक ४

समाधान

विपश्यना से स्वास्थ्य में सुधार होता ही है, परन्तु विपश्यना को केवल मात्र शारीरिक स्वास्थ्य के सुधार के मापदंड से ही नहीं मापना चाहिए अन्यथा शुद्ध धर्म का अवमूल्यन होता है। स्वास्थ्य मनोनुकूल न हो तो भी उसको लेकर मन अपनी समता न खो बैठे, संतुलन न बिगाड़ बैठे, यही विपश्यना का बहुत बड़ा लाभ है। विश्वास है विपश्यना तुम्हें यथोचित मानसिक क्षमता प्रदान करेगी और उससे स्वास्थ्य में भी लाभ होगा ही।

यह आवश्यक नहीं है कि अनुभूति सदा बदलती ही रहे। लम्बे अरसे तक एक ही अनुभूति चले तो उसमें कोई दोष नहीं। कोई भी अनुभूति अपने आपमें ही अनित्यता की बोधक है। यह अनित्यता की अनुभूति भी अपना स्वरूप बदले या न बदले यह अलग बात है। जहाँ कुछ ठोस मालूम होता है वहाँ कुछ देर रुक कर भेदन कर लेना ही ठीक है, परन्तु बीच-बीच में सारे शरीर की यात्रा करते रहना चाहिए। भिन्न-भिन्न प्रकार से ही साधना का अभ्यास करना चाहिए जिससे कि साधना यन्त्रवत् न हो जाय। समय कम लगे या अधिक, इसका भी कोई महत्व नहीं है। मुख्य बात यह है कि मन को शरीर के भीतर होने वाली संवेदनाओं के प्रति जागरूक रखें और किसी भी प्रकार की स्थिति को लेकर समता न खो बैठें। उसका संतुलन बना ही रहे। यही विपश्यना का अभ्यास है।

मंगल भावना में शरीर के जिस किसी भाग में सूक्ष्म तरंगे महसूस होती हों, उसी पुलक रोमांच को ही मैत्री भावों से भरकर यह साधना करनी चाहिए। यदि हृदय क्षेत्र में भी ऐसी पुलकावलियाँ महसूस होती हों तो विशेषरूप से यहाँ से कर सकते हैं।

किसी भी बात को अंध विश्वास में मान लेना धर्म के विरुद्ध होता है। स्वयं अपनी अनुभूतियों से किसी बात को जान लेना और जानकर उसे स्वीकार करना यही धर्म की बात होती है।

धम्म वाणी

मनुजस्स पमत्तचारिनो तण्हा वड्ढति मालुवा विय ।
सो प्लवति हुराहुरं फलमिच्छं व वनास्मिं वानरो ॥
धम्मपद २४/१

प्रमत्त होकर आचरण करनेवाले मनुष्य की तृष्णा मालुवा लता की भांति बढ़ती है, वन में फल की इच्छा से कूद-फांद करते बन्दर की तरह वह जन्म-जन्मान्तर में भटकता रहता है।

एक साथ एक से अधिक साधना पद्धतियों को सम्मिश्रित करते रहने का पागलपन दूर हो और विपश्यना के प्रति अनन्य भाव पुष्ट हो तो ही ऐसे किसी व्यक्ति को लम्बे अरसे तक इस साधना पद्धति की गहराइयों तक ले जाने का अभ्यास कराया जा सकता है।

तुम्हें भी नित्य प्रति सुबह-शाम साधना करके अपनी साधना का पुष्प अपने माता-पिता तथा परिवार के अन्य लोगों को बांटना चाहिए जिससे कि उनका धर्म बल बढ़े और साथ-साथ तुम्हारा भी।

जिस समय मन अधिक बेचैन हो, बार-बार उचट जाता हो, उसी समय तो साधना की आवश्यकता है। ऐसे समय साधना सहायक न होगी तो वह हमारे किस काम की?

वासना की तरह भय भी हमारे अंतर्मन का एक अत्यंत महत्वपूर्ण विकार है। बड़े घोरज के साथ अभ्यास करते हुए इस विकार से भी छुटकारा लेना है। जब जब भय का संचार हो तो जिन कारणों को लेकर भय के विकार उत्पन्न हुए हैं, उन कारणों को महत्व न देकर इस बात को महत्व देना चाहिए कि इस समय मेरी चित्त-धारा पर भय का विकार उत्पन्न हुआ है और उसके साथ-साथ शरीर में इस प्रकार की संवेदनाएं हो रही हैं। संवेदनाएं अनित्य हैं और इसी प्रकार यह विकार जो मन में जागा है, यह भी अनित्य है; परिवर्तनशील है; सदा रहनेवाला नहीं है, यों इसे साक्षी भाव से देखेंगे तो इसका प्रभाव भी क्षीण होता चला जायगा, इसकी जड़ें

उखड़ती चली जायेंगी। विपश्यना द्वारा विकारों के उन्मूलन का यही तरीका है।

जब कोई विकार मनमें उठे, चाहे वह वासना का ही क्यों न हो, तत्काल चित्त का एक भाग उसे साक्षी भाव से देखने लगे और साथ-साथ शरीर के किसी हिस्से में जो संवेदना हो रही है उस संवेदना को भी साक्षी-भाव से देखे। सिर से पांव तक जहाँ कहीं भी संवेदना हो रही है उसके अनित्य भाव को समझते हुए यह भी समझे कि मन में जो यह विकार उठा है वह इन संवेदनाओं की तरह ही उदय-व्यय होनेवाला है। ध्रुव और शाश्वत नहीं है। देखें कि इसका प्रभाव भी कितनी देर रहता है ?

जैसे ही यों दृढ़तापूर्वक साक्षीभाव से देखने लगेंगे, वैसे ही हर विकार का, चाहे वह वासना हो या और कुछ, उसका शमन होगा ही।

जब कभी मन इस बात (किसी प्रिय जन के देहान्त) को लेकर विह्वल हो उठे तो इस विह्वलता को कुछ देर साक्षी भाव से देखते रहना चाहिए और साथ ही साथ उस समय जो भी शारीरिक संवेदना हो, उसे भी। इससे विह्वलता का यह भावावेश बहुत गहरा असर नहीं पैदा कर सकेगा।

(समय-समय पर साधकों द्वारा पूछे गए प्रश्नों के उत्तर में पूज्य गुरुजी द्वारा समाधान के कुछ अंश !) (संपादक)

सम्यक् साधना से ही विमुक्ति

मनीषी द्रष्टाओं ने मानव के अंतर जगत् की खोज के लिए कष्टसाध्य साधना व तपोमय जीवन अपना कर जो अनुभूतियाँ मानव-समाज को दी हैं, वे परम कल्याणकारी हैं। हमारा अन्तर्जगत ही जानने व खोज करने योग्य है। सामान्य मनुष्य की दृष्टि तो सदैव बाहर भौतिक जगत की ओर ही रहती है, क्योंकि वह प्रत्यक्ष एवं व्यक्त है तथा सुखरूप भासता है। जब कि वास्तविकता यह है कि समस्त जगत सर्वथा अस्थिर व अनित्य है। निरन्तर प्रतिक्षण बदलता चला जा रहा है। जैसे नदी का जल-प्रवाह, दीपक की लौ, बिजली की विद्युतधारा आदि। यह बोध तभी हो पाता है जब कि अन्तर्मुखी साधना द्वारा प्रज्ञा जागृत हो पाई हो। माया के प्रभाव से सामान्य व्यक्ति को मात्र बाह्य सूचना से वास्तविकता अनुभव में नहीं आ पाती। अतः मनुष्य बाहर ही सुख की खोज में भटकता रहकर सारा आयुष खो देता है।

मनीषियों ने अंतर प्रवेश की साधना खोजकर अन्तर्जगत् के रहस्यों का उद्घाटन किया है। चेतना जगत् भीतर है। इसी की अनुभूति से अन्तर्बाह्य जगत् की यथातथ्यता स्पष्ट हो सकती है। चेतना पर जो संस्कार व वासनाएं कर्मचक्रानुसार अंकित हो जाते हैं उन्हीं के अनुरूप व्यक्ति व्यवहार व कर्म करता चला जाता है। अतः अन्तःचेतना को परिष्कृत व सुसंस्कृत बनाया जाना व्यक्तित्व के

विकास व कल्याण के लिए परम आवश्यक है। यहीं से धर्म का आरंभ है।

चेतना स्कंध के चार सहज विभाग कहे जा सकते हैं—विज्ञान, संज्ञा, वेदना, संस्कार अथवा यों कहें—मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार, जिनका कार्य क्रमशः जानना, पहचानना, संवेदनशील होना तथा प्रतिक्रिया करना है। हर घटना में क्रिया व व्यवहार द्वारा मनुष्य मोह, मूढ़ता के प्रभाव में राग-द्वेषपूर्ण संस्कारों के बीज-अंकुरों का निर्माण करता चला जाता है। ये संस्कार तीन श्रेणी के कहे जा सकते हैं—जैसे पत्थर की लकीर, बाल की लकीर तथा पानी की लकीर। सजग साधक कभी किसी विषम परिस्थिति में भी प्रतिक्रिया स्वरूप पत्थर की लकीर के सदृश कठोर संस्कार नहीं बनने देगा। क्योंकि ऐसे हर संस्कार का बीज कालान्तर में बटवृक्ष की नाई अनंत फल व बीज रूप संस्कार निर्माण करता हुआ भवचक्र-प्रवाह बनाता चला जाता है। इसका कहां, कब अंत आनेवाला है ? उस अभागे जीव का जन्म-मरण के दुःख का अंत अनंतकाल तक आने वाला नहीं है।

जब मानव साधक की संज्ञा प्राप्त कर होश में आता है, सजगता का अभ्यास करता है तथा सम्यक् दृष्टि को धारण कर अपनी प्रज्ञा को जगाता है, तब धर्म-चक्र प्रवर्तन का आरंभ होता है। हर क्षण होश में रहने का अभ्यास परम मंगलकारी सिद्ध होता है। नए संस्कार न बनने पावें तथा अपने भीतर स्व का निरीक्षण करते हुए संचित वासना-संस्कारों का शमन करने का अभ्यास मंगलकारी अभ्यास ही है।

होश में रहने का अभ्यास सधा होगा तो यदि कोई अभागा व्यक्ति क्रोध या द्वेष-वश होकर हमारे प्रति दुर्व्यवहार के अंगारे उछालेगा तो हम अपनी चेतना को पेट्रोल की टंकी न बनने देकर पानी की शीतल टंकी द्वारा उन अंगारों को शांत कर सकेंगे। अन्यथा अंधप्रतिक्रिया स्वरूप भयंकर आग पैदा होती है। नए कठोर संस्कारों के भव-बीज चेतना में संचित हो जाते हैं जो बटवृक्ष के अनंत बीजों की तरह अनन्त भव प्रवाह का हेतु बनते हैं। विकारों की प्रतिक्रिया स्वरूप नए-नए संस्कारों का प्रवाह बनता चला जाता है। इसके विपरीत अपने भीतर अपनी चेतना का निरीक्षण करते हुए साधक को अपनी वास्तविकता का आभास मिलने लगता है तथा वह तत्परतापूर्वक व्यवहार-काल में शील-सदाचार का पालन करता हुआ चित्त की एकाग्रता व चित्त को अपने वश में रखने के साथ-साथ चित्त के विकारों, दोषों को शमन करने की सम्यक् साधना अपनाता है। तभी चित्तस्कंध में ऊपरी चेतना स्तर के ही नहीं, भीतरी अर्द्ध-चेतन व अचेतन स्तर तक की अनंत वासनाओं, आसक्तियों के संस्कारों का विभिन्न संवेदनाओं के रूप में अवलोकन करते हुए, उनको प्रज्ञा के प्रकाश में अनित्य बोध व समता तथा साक्षीभाव की साधना से क्षीण करता हुआ चित्तस्कंध को तल स्पर्शी गहराइयों तक निर्मल, निर्विकार बनाता चला जाता है। अंत में चित्त-भूमिका को सर्वथा निर्मल, निर्वासना की स्थिति में लाकर अपने समस्त बंधनों, क्लेशों से मुक्त हो, कृतकृत्य हो जाता है। तभी साधक प्राणी-मात्र के प्रति अनंत मैत्री, करुणा, मुदिता, समता रूपी ब्राह्मी सद्गुणों से भर

जाता है। जिसने इस प्रकार अपना मंगल साध लिया है, वही अरिहन्त, निर्ग्रन्थ, स्थितप्रज्ञ है। विमुक्ति, निर्वाण, कैवल्य आदि ब्राह्मी स्थिति को सहज प्राप्त है। यही धर्म है जो धारण करने से ही कृतार्थ करता है। यही सम्यक् साधना है जो शील, समाधि, प्रज्ञा के संपूर्ण अनुपावन व अभ्यास से ही सिद्ध होती है। कदम कदम इस अवस्था की ओर बढ़ते रहना है। इसी में आत्म मंगल एवं सर्व-मंगल है।

भवतु सब मंगल !

(पु. गुरुजी के एक मंगल प्रवचन से)

संग्राहक : रामेश्वरदास गर्ग, प्राकृतिक चिकित्सालय, बापू नगर,
जयपुर (राज.)

साधकों के उद्गार

मद्रास के श्री बांकेलाल गुप्ता, जो अनेक शिविरों में सपरिवार सम्मिलित हो चुके हैं और उनके द्वारा अन्य अनेक लोगों को लाभ मिला है, लिखते हैं, “आपने मुझे क्या दे दिया ! इस भटके हुए पथिक को कैसा सुख, शांति, आनंद तथा निर्वाण का मार्ग दिखाया ! मेरे पास तो शब्द ही नहीं हैं। कैसे आपका धन्यवाद करूं ! बार बार हृदय से यही उद्गार निकलते हैं—आपका सच्चे रूप से सदा सर्वदा मंगल हो ! कल्याण हो ! भला हो ! आप दीर्घायु हों जिससे आप इस मानव धर्म का, इस शुद्ध धर्म का, इस सत्य धर्म का अमृतरस भूले-भटके हुए प्राणियों को चला सकें। अधिक से अधिक प्राणियों को लाभ पहुंचा सकें।

मेरी प्रगति पहले से अच्छी चल रही है। त्रुटियां तो हैं ही। मन भी बढ़ा ही चंचल है। अपना खेल खेळता ही रहता है। परंतु अब तो कुछ महीनों से विकार उठने के साथ-साथ तुरंत ही उनका पता लग जाता है और केवल देखने मात्र (आन्त्रज्वेशन) से ही कितनी जल्दी शमन हो जाता है। इतनी शीघ्र चेतनता आती है। ..



दोहे

विगत वर्ष ९, अंक २ के लेख “धम्मगिरि पर पावस-ऋतु” से संबंधित पूज्य गुरुजी द्वारा रचित दोहे प्रकाशन के लिए यथा-समय नहीं पहुंच पाए थे। अभी वर्षा-ऋतु के अंतिम दौर में भी यहाँ वैसा ही मनोरम वातावरण है। अतः उपयोगिता को ध्यान में रखते हुए ये दोहे इस अंक में प्रकाशित हैं। (सं.)



सामयिक दान

धम्मगिरि पर विपश्यना विश्व विद्यापीठ के भवन निर्माण के दूसरे दौर का कार्य द्रुतगति से आगे बढ़ रहा है और विश्वास है १४ नवम्बर को होने वाले शिविर क्रमांक १६८ के पूर्व आचार्य-निवास का शेष भाग, नव धम्म-प्रकोष्ठ, अतिथि-गृह, बाल-गृह, एवं १२ अन्य श्रृंगारों (ध्यान-गुफाओं) के निर्माण का कार्य पूरा

हो जायेगा। अब तक देश-विदेश से आए हुए तथा वचन दिए गए दान से उपरोक्त भवन-निर्माण कार्य संपन्न हो रहा है। परंतु इन नए भवनों के लिए बिजली, पंखे, दरी, बिछावन, आसन, रंग-रोगन तथा अन्य अनिवार्य वस्तुओं के लिए आवश्यक अर्थ की कमी रहती नजर आती है। जो साधक धर्म-चेतना से इस कार्य में सहयोग देना चाहें वे इस सामयिक दान में सम्मिलित होकर पुण्यलाभ ले सकते हैं जिससे कि समय रहते शिविरों का आगामी कार्यक्रम शुरू होने के पूर्व ही सारा काम पूरा हो जाय और आने वाले साधकों तथा साधना-प्रशिक्षण के लिए अधिकतम सुविधाएं उपलब्ध हों।



मां सयामा

मां सयामा १८ अक्टूबर को विलायत से भारत आ रही हैं और जयपुर के शिविर क्रमांक १६७ में सम्मिलित होंगी। शिविर के पश्चात् लगभग २० दिन तक जयपुर के “विपश्यना केन्द्र” में रुकेंगी जिससे कि अधिकतर पुराने साधकों को तथा कुछ नए साधकों को उनके द्वारा धर्मलाभ मिल सके। इसी प्रकार हैदराबाद के शिविर क्रमांक १७१ के २० दिन पूर्व वहां के “विपश्यना अन्तर्राष्ट्रीय साधना केन्द्र” में पधारकर उस ओर के पुराने साधकों व कुछ नए साधकों के लिए दो शिविर लगाकर धर्मलाभ प्रदान करेंगी। शिविरार्थी अपनी बुकिंग के लिये संबंधित व्यवस्थापकों के पास अपने आवेदन-पत्र भेज सकते हैं।

इगतपुरी में स्वयं-शिविर

क्रमांक	५१	दि.	१२-१०-७९	से	२३-१०-७९	तक
”	५२	”	२३-१०-७९	से	३-११-७९	”
”	५३	”	३-११-७९	से	१४-११-७९	”
”	५४	”	२५-११-७९	से	४-१२-७९	”
”	५५	”	२-१२-८०	से	१३-१-८०	”

संपर्क : व्यवस्थापक, विपश्यना विश्व विद्यापीठ, धम्मगिरि,

इगतपुरी-४२२ ४०३. (नासिक-महाराष्ट्र) फोन नं. ७६.

सूचना : १) स्वयं-शिविर में केवल वे पुराने साधक ही सम्मिलित हो सकेंगे जो कि विद्यापीठ की अनुशासन-संहिता का आत्मविश्वास के साथ कड़ाई से पालन कर सकें।
२) कोई साधक यदि पूरे शिविर में सम्मिलित न हो सके तो वह अपनी सुविधानुसार बीच में कम दिनों के लिए भी सम्मिलित हो सकता है।

३) प्रत्येक अवस्था में आवश्यक है कि व्यवस्थापक से अपना स्थान सुरक्षित रखने की पूर्व स्वीकृति प्राप्त कर लें।

४) यथासंभव हर शनिवार तथा रविवार के दिन पू. गुरुजी धम्मगिरि पर उपस्थित रहेंगे। अतः साधक उनका मार्गदर्शन प्राप्त कर सकेंगे।

५) स्वयं शिविर में अन्य सभी सुविधायें उपलब्ध रहेंगी।

व्यवस्थापक

आगाभी शिविर

शिविर क्रमांक : १६७ जयपुर (वि. के.) दि. २७-१०-७९ से ६-११-७९ तक (हिंदी)

संपर्क श्री. श्यामसुंदर मूंदडा, द्वारा विपश्यना समिति, जी-१/ए, अशोक मार्ग, जयपुर ३०२००१ फोन कार्या. : ५५४१४ घर : ६३३२२

शिविर क्रमांक : १६८ इगतपुरी (वि. वि. वि.) दि. १४-११-७९ से २५-११-७९ तक (हिंदी)

" १६९ " " दि. ४-१२-७९ से १५-१२-७९ तक (अंग्रेजी)

" १७० " " दि. २१-१२-७९ से १-१-८० तक (हिंदी)

सम्पर्क : व्यवस्थापक, विपश्यना विश्व विद्यापीठ, धम्मगिरि, इगतपुरी-४२२४०३ (नासिक महाराष्ट्र) फोन : इगतपुरी ७६.

शिविर क्रमांक : १७१ हैद्राबाद (वि. अं. सा. कें.) दि. ४-१-८० से १४-१-८० तक (हिंदी)

सम्पर्क : श्री. रतीका एम. मेहता द्वारा विपश्यना अन्तरराष्ट्रीय साधना केन्द्र, कुसुम नगर, हैद्राबाद-५०००३५ (ऑ. प्र.) फोन ५९२५९

पुण्य पुरुषी का स्वयं-शिविर : इगतपुरी दि. १९-१-८० से ३०-१-८० तक (प्रतिबंधित) (केवल स्वीकृति-प्राप्त पुराने साधकों के लिए)

शिविर क्रमांक : १७२ इगतपुरी (वि. वि. वि.) दि. १-२-८० से १२-२-८० तक (अंग्रेजी)

सूचना : १) कृपया साधना शिविर में शामिल होने से पूर्व शिविर-व्यवस्थापक के पास अपना नाम रजिस्टर करा लें। किसी कारणवश शिविर में सम्मिलित न हो सकते हों तो कृपया पर्याप्त समय रहते सूचित करें ताकि किसी अन्य प्रत्याशी को स्वीकृति दी जा सके।

२) अंग्रेजी शिविर में हिन्दी-प्रवचन सुनने लिए हिन्दी टेप की सुविधा उपलब्ध रहती है।

३) शिविरों के नियम कड़े होते हैं। उनका कड़ाई से पालन कर सकें तो ही भाग लेना चाहिए।

ग्राम - केमिटो

फोन नं. फॅक्ट्री ३७८४७५/३९३९८९ कार्या. २९६१३१/२९५७६८

मेसर्स तोषणीवाल इन्स्ट्रुमेन्ट्स (बम्बई)

१९८, जमशेदजी टाटा रोड, चर्चगेट, बम्बई ४००००२.

की मंगल कामनाओं सहित।

दूहा धरम रा

धन धन धन पावस रितू, धन धन परबत देस।
ध्यान लगे, प्रग्या जगै, कालस रवै न सेस ॥
झर झर झर मिंवड़ो झरै, धरती पुलकित होय।
अन्तरमन इमरत झरै, हिवड़ो हुलसित होय ॥
पल पल पलटत ही रवै, प्रकती अपणो भेस।
अग जग मँह थिर कुछ नहीं, देवै ओ संदेस ॥
अह नभ छावै धन घटा, हुवै च्यानणो दूर।
खीरे होस विवेक को, ज्यूं मन मद भरपूर ॥
अम्बर फाटै बादली, निरमल हुवै अकास।
हूँटे कलेस, कालस कटै, अन्तर हुवै उजास ॥
आमै चिमकै बीजली, दूर करै अंधियार।
ग्यान जोत भीतर जगै, प्रगटै सत को सार ॥

दोहे धरम के

पावस ऋतु पर्वत प्रभा, चित अन्तर्मुख होय।
आगे प्रज्ञा बलवती, सफल साधना होय ॥
धरमगिरि पर धरम की, अमृत वर्षा होय।
शाप ताप सबके धुलें, अन्तस शीतल होय ॥
अन्य ध्यान की गिरि गुहा, धन्य ध्यान का स्तूप।
यहां शांति सबको मिले, भिक्षुक हो या भूप ॥
बाहर वर्षा जल झरे, तरु तृण निर्मल होय।
भीतर प्रज्ञा जल झरे, तन मन निर्मल होय ॥
वर्षा जल के बुदबुदे, वर्षा जल के ज्ञाग।
बोलें जगत अनित्य है, दुखदाई है राग ॥
कुटिया छाई जतन से, अब बरसो मेघेश।
छाई चित पर धरम छत, होय न राग प्रवेश ॥

हयाजी ऊ बा खिन मेमोरियल ट्रस्ट के लिए मुद्रक, प्रकाशक एवं संपादक : रामप्रताप यादव, ग्रीन हाऊस, २ री मंजिल, ग्रीन स्ट्रीट, फोर्ट,

बम्बई २३. टेलीफोन : ३१३५१०. • मुद्रण स्थान : अक्षरचित्र मुद्रणालय, सातपुर, नासिक ४२२ ००७. टेलीफोन ८२५१ •

पत्रिका में विज्ञापन दर : आधा पृष्ठ रू. ४००/-, चौथाई पृष्ठ रू. २००/- • वार्षिक शुल्क रू. ५/-, आजीवन शुल्क रू. ५१/-

"विपश्यना"

मो. रजि. नं. NSK-64

License No. NS 18
Licensed to post without pre-payment

प्रेषक :

हयाजी ऊ बा खिन मेमोरियल ट्रस्ट
विपश्यना विश्व विद्यापीठ
धम्मगिरि, इगतपुरी-४२२ ४०३.
(नासिक, महाराष्ट्र)

To